P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-2* ISSUE-4* July- 2017
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

लोक साहित्य की भौगोलिक सांस्कृतिक सीमाओं की अतिरेक क्षमताः जाहरवीर कथा

सारांश

लोक साहित्य में संचित सांस्कृतिक तथ्यों में बहुत सी ऐसी सम्भावनायें हैं जिनके अध्ययन से वर्तमान समय के बहुत से प्रश्नों के उत्तर खोजे जा सकते हैं। वर्तमान में भारत पाकिस्तान की सियासी सक्रियताओं ने नई भौगोलिक सांस्कृतिक संरचनाओं को जन्म दिया है लेकिन हमारी लोक सांस्कृतिक संरचना इस को आसानी से स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है। राजनीतिक भूगोल की परिभाषा में भारत और पाकिस्तान दो अलग अलग संरचनायें हैं जिनकी राजनीतिक सामा को विधिवत राजनीति ने निर्धारित कर दिया है लेकिन लोक साहित्य में इस तरह के निर्धारण को काल्पनिक और गैर संवेदनशील बताने वाले तमाम तथ्य मौजूद हैं। इसी तरह की एक लोक कथा जाहरवीर की कथा के रूप में प्रचलित है। इसका यह शोध आलेख गम्भीर विवेचनात्मक प्रयास है कि किस तरह से जाति, धर्म, क्षेत्र और राजनीतिक विभाजनों की विसंगतियां इस कथा में व्यक्त होती हैं।

कुशलपाल सिंह
परियोजना साथी,
हिन्दी विभाग,
आगरा कॉलेज,
आगरा

भूपाल सिंह
सह प्रध्यापक,
हिन्दी विभाग,
आगरा कॉलेज,
आगरा

मुख्य शब्द : जाहरवीर की कथा, लोक साहित्य, भौगोलिक संस्कृति, जाति, धर्म, क्षेत्र।

प्रस्तावना

जाहरवीर की कथा उत्तर–भारत के बड़े क्षेत्र में प्रचलित है। यह कथा न तो पूरी तरह से ऐतिहासिक कथा है और न ही काल्पनिक आख्यान भर है। इस कथा के बारे में बहुत से मत प्रचलित हैं। यह मान्यता है कि जाहरवीर राजस्थान के चुरू जिले की राजगढ़ तहसील के ददरेवा के चौहान वंशीय राजा जेवर सिंह के पुत्र थे। इनकी माता का नाम बाछल था। जाहरवीर का विवाह राजा सिझिया सिंह की पुत्री सिरियल (श्रीयल) के साथ हुआ। वे ददरेवा के राजा बने और अपने शौर्य, पराक्रम सिद्धिकार्यों के फलस्वरूप राजस्थान में ही नहीं, अपितु मालवा, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश आदि क्षेत्रों में श्रद्धा के प्रतीक बन गये। जिससे उनकी पूजा इन दूरस्थ क्षेत्रों में भी होती है। जाहरवीर की मृत्यु के बारे में भी विभिन्न मत प्रचलित हैं। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि जाहरवीर महमूद गजनवी से युद्ध करते हुए शहीद हो गये थे। वहीं जनश्रुति के अनुसार वे पारिवारिक संघर्ष में मौसेरे भाइयों अरजन व सरजन को मारने के बाद गोरख टीला स्थित गुरू गोरखनाथ के पास तपस्या करने गये और वहीं धरती में समाधि ले ली। जाहरवीर के समय में उनके क्षेत्र में प्रभावी धर्मों में वैष्णव, शैव तथा जैन धर्म के साथ–साथ नाथ पंथ धार्मिक स्थिति से प्रभावी थे। ऐसी मान्यता है कि जाहरवीर व गुरू गोरखनाथ में गुरू शिष्य का सम्बन्ध था और जाहरवीर गोरखनाथ के आशीर्वाद स्वरूप ही जन्मे थे। जाहरवीर गोरखनाथ से शिक्षा–दीक्षा ग्रहण करने के बाद गोरखनाथ के अनुयायी बन गये थे और नाथ पंथ स्वीकार कर लिया था।

जाहरवीर के समय को लेकर अनेक इतिहासकारों ने अपने–अपने मत प्रकट किये हैं– **पं0 झावरमल शर्मा** सम्वत् 1440 में फिरोजशाह तुगलक से युद्ध में वीरगति को प्राप्त होना लिखते हैं।[1] वहीं क्याम खाँ रासो के लेखक **कविवर** के अनुसार घांघू बसाने वाले घंघराम की पांचवीं पीढ़ी में गोगाराणा (जाहरवीर) पैदा हुए थे।[2] चौहान वंश के प्रमाणिक इतिहासकार **डॉ0 दशरथ शर्मा** ने क्याम खाँ रासो के पद्यांक 110 को देखकर लिखा है कि 'क्या यही ददरेवा का वीर चौहान है।' हम एक पीढ़ी के 24 वर्ष रखें तो जाहरवीर महमूद गजनवी के समकालीन बैठता है।[3] **कविराज सूरजमल** ने लिखा है कि काना की गद्दी के उत्तराधिकारी को लेकर गोगा जी के मौसेरे भाई युद्ध में शिकस्त खाकर ईराक के बादशाह अबुफर को जाहरवीर पर चढ़ाई करने के लिए कहते हैं, जिससे जाहरवीर अपने अनेक पुत्रों सहित युद्ध में मारे जाते हैं।[4] **कर्नल टाड़** ने लिखा

है कि गोगाजी चौहान ने अपने पुत्रों सहित महमूद गजनवी के आक्रमण में सतलज मार्ग की रक्षा में अपने प्राण न्यौछावर किये थे।[5] लेखक **रामेश्वर टांटिया** के अनुसार राजस्थान में सबसे बड़ा जौहर श्री गंगानगर जिले के निकट भादरा के निकट गाँव गोगामेडी नामक स्थान पर 1024 में हुआ। उनके अनुसार इसमें 700 कुल वधुऐं अपने बच्चों को गोद में लेकर भस्म हो गई थीं। जब गजनवी की फौज मेडी पर पहुँची तो वहाँ राख के ढेर एवं अधजले मांस के अवशेष थे।[6] राजस्थानी शब्द कोष में जाहरवीर का समयकाल दिल्ली के बादशाह समसुद्दीन अल्तनिस के पुत्र रूनकदीन फिरोजशाह के समकालीन निर्धारित किया गया है। विक्रमी की 12वीं व 13वीं शताब्दी के मध्य चौहानों की प्रबल शक्ति के फलस्वरूप उनके राज्य का विस्तार दूर–दूर तक फैला हुआ था। इस काल में चौहान भारत की शक्ति के एक स्तम्भ माने जाते थे। चुरू और इसके आस–पास के इलाकों पर चौहानों के ठिकाने 10वीं शताब्दी या फिर 11वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही स्थापित होने शुरू हो गये थे।[7]

डॉ0 तोसीतोरी ने इस समय की एक हस्तलिखित पुस्तक जोधपुर में देखी जिसका हवाला चुरू मण्डल के शोधपूर्ण इतिहास के लेखक गोविन्द अग्रवाल ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

'चावाण जेवर तिणरो राणा खेताव थो,
गढ ददरेवा राजधानी थी।'

ददरेवा चौहानों का एक मजबूत गढ था एवं उस समय ददरेवा के अधीन एक बड़ा भू–भाग था। ददरेवा पर चौहानों की 28 पीढ़ियों ने राज किया। इसी वंश के राव जैतसी के शिलालेखों पर संवत् 1273 माघ सुदी अंकित है।[8] राव जैतसी के इस शिलालेख से राव जैतसी के शासनकाल की एक निश्चित तिथि का ज्ञान होता है। राव जैतसी की सातवीं पीढ़ी में मोटेराय के करमचन्द नामक एक पुत्र था। जिसे दिल्लीपति बादशाह फिरोजशाह तुगलक ने तुर्क बनाकर क्याम खाँ नाम रखा। यह सर्वविदित है कि फिरोजशाह का समय 1351–1388 ई0 रहा था। क्याम खाँ और राव जैतसी के कालक्रम की गणना करने पर गोगाजी का समय 10वीं, 11वीं शताब्दी में आता है। जो महमूद गजनवी के समकालीन बैठते हैं।

जाहरवीर के आख्यान में कथा और इतिहास दोनों घुले–मिले हैं। अभी तक प्राप्त प्रमाणों के आधार पर कोई स्पष्ट ऐतिहासिक निर्णय सम्भव नहीं है। कथा के विस्तार में इतिहास का हस्तक्षेप बराबर बना रहता है। जाहरवीर का आख्यान जनमानस में और जनमानस ऐतिहासिक आवश्यकताओं के अनुरूप एक निश्चित प्रक्रिया में कुछ नई चीजें उसमें जोड़ता चलता है तो कुछ पुरानी चीजें हटाता चलता है।

जाहरवीर का आख्यान इतिहास और मिथकीय आख्यानों के बीच का है। भृतहरि[9] ने जाहरवीर का उल्लेख किया है। इसका अर्थ है कि यह आख्यान भृतहरि के समय तक निर्मित हो चुका था। गोगापुराण की कथा के अनुसार तो यह महाभारत के समय तक जाता है लेकिन यह पुराण काल में की गई परिकल्पना लगती है क्योंकि भृतहरि से पहले के किसी ग्रन्थ में जाहरवीर के बारे में कुछ उल्लेख नहीं मिलता है। जाहरवीर के मिथकीय निर्माण में इस बात को ध्यान देना ज्यादा महत्वपूर्ण है कि उसके जैसे अन्य मिथकीय चरित्र किस रूप में पाये जाते हैं। जाहरवीर के युग इसके पूर्व के मिथकीय चरित्रों से मेल खाते हैं। जाहरवीर की मूल संरचना किन मिथकीय चरित्रों से मेल खाती हैं।

जाहरवीर की कथा निर्माण में वर्षों की जातीय स्मृति काम करती दिखती है। भारतीय परम्परा के चमत्कारवाद का हस्तक्षेप और जाहरवीर की संरचना एक समय की मानी जानी चाहिए। स्थानीय रूप में जिन क्षेत्रों में वीर जातियों या लड़ाकू जातियों का पूर्ण प्रभुत्व नहीं है वहाँ 'वीर बाबा' के 'पर' सर्ग लगाकर स्थानीय देवता बनाने की परम्परा देखी जाती है, जिसमें चमत्कार को भरकर किसी चरित्र की रचना की गई है। इन चरित्र रचनाओं में जनविसर्जन के प्रभाव को भी गिना जाना चाहिए जिसमें जन समुदाय एक स्थान से दूसरे स्थान की तरफ चले आये हैं। लेकिन उनकी स्मृतियों में पहले के स्थानों की जातीय स्मृतियाँ बनी हुई हैं।

वर्तमान में जाहरवीर की कथा हिन्दू, मुस्लिम एवं सिख धर्मों में प्रमुख रूप से प्रचलित हैं। प्रारम्भ में यह हिन्दू धर्म में ही प्रचलित हुई होगी। लेकिन धर्म के आधार पर सामुदायिक विभाजनवाद के फलस्वरूप यह कथा शनैः–शनैः मुस्लिम एवं सिख धर्मों में भी प्रचलित होती चली गई होगी। इस कथा के प्रचलन के पीछे जनविसर्जन भी एक बड़ा कारण हो सकता है। क्योंकि किसी भी समुदाय के लोग जब एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं तो वो अपने साथ अपनी भाषा, संस्कृति एवं सभ्यता को साथ ले जाते हैं जिससे अन्य दूसरे लोग भी प्रभावित होते हैं। सम्भवतः प्रारम्भ में जाहरवीर वीर को मानने वाले लोगों में विसर्जन हुआ हो और धर्म परिवर्तन भी जिसके फलस्वरूप कालान्तर में यह कथा अन्य धर्मों में भी प्रचलित होती चली गई होगी। क्योंकि जाहरवीर को मानने वाले जिन लोगों ने धर्म परिवर्तन किया होगा उन लोगों ने अपने आराध्य को नहीं छोड़ा होगा, जिससे यह कथा धीरे–धीरे हिन्दू सहित मुस्लिम एवं सिख धर्मों भी प्रचलित है। जिसके फलस्वरूप इन धर्मों की विभिन्न जातियों के लोग जाहरवीर की पूजा अर्चना करते हैं। जाहरवीर को नाथ सम्प्रदाय से जोड़ा जाता है। भारतीय इतिहास में बौद्ध धर्म के पतन के बाद जो तमाम पन्थ पैदा हुये उसमें बीच फैला पन्थ था। जो कि भारत के उत्तर पष्चिमी भाग से शुरू हुआ।

नाथ सम्प्रदाय के प्रवर्तक गोरखनाथ कहे जाते हैं। भारतीय दन्त–कथाओं में गोरखनाथ सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान कहे गये हैं। तिब्बती जनश्रुति के अनुसार गोरखनाथ एक बौद्ध बाजीगर थे और उनके सारे कनफटे शिष्य भी आदि बौद्ध थे। किन्तु बारहवीं शताब्दी के अन्त में सेन वंश के नाश होने पर वे शैवमत में हो गये।[10]

राजस्थान की जनश्रुतियाँ गोरखनाथ के अनेक नाम बतलाती हैं, जिनमें मुख्य 'गुग्ग' या 'गुग' है। ये 'जहरपीर' भी कहे जाते हैं, क्योंकि इन्होंने अपने शिशुपन में ही एक सर्प खा लिया था। ये बागर या उत्तरी राजस्थान के शासक भी कहे जाते हैं, इसलिए इनका नाम 'बागरवीर' भी कहा जाता है। एक जनश्रुति के अनुसार ये आजमेर के पृथ्वीराज चौहान के समकालीन थे। दूसरी

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-2* ISSUE-4* July- 2017
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

जनश्रुति के अनुसार ये अपने 45 पुत्र और 60 भतीजों के साथ मुहम्मद गौरी के साथ युद्ध करते हुए मारे गये।[11]

मराठी–साहित्य में ज्ञानेश्वरी का बड़ा मान है। उसके लेखक हैं श्री ज्ञानेश्वर महाराज। पं0 लक्ष्मण रामचन्द्र पांगारकर बी0ए0 ने मराठी में 'श्री ज्ञानेश्वर चरित्र' नामक पुस्तक लिखी है, जिसका अनुवाद हिन्दी में श्री लक्ष्मीनारायण गर्दे ने किया है। उसके अनुसार श्री ज्ञानेश्वर के प्रपितामह श्री त्र्यम्वक पंत थे जो गोरखनाथ के समकालीन थे। त्र्यम्वक पंत के सम्बन्ध में श्री पांगारकर लिखते हैं– "त्र्यम्वक पंत ने यज्ञोपवीत होने के पश्चात् देवगढ जाकर वेद–शास्त्र का अध्ययन किया। इनकी पूर्व वयस देवगढ के यादव राजाओं की सेवा में व्यतीत हुई और उत्तर वयस में इन्होंने गोरखनाथ की कृपा से भगवच्चिन्तन का आनन्द लिया। इन्होंने पांच वर्ष तक बीड के देशाधिकारी का काम किया। शाके 1129 (सं0 1264) प्रभव–नाम संवत्सर चैत्र शुक्ल 5 इन्दुसार प्रातःकाल घटि 11 का एक राजाज्ञपत्र पंगारकर महोदय ने प्रकाशित किया है। उससे यह मालूम होता है कि जैत्रपाल महाराज ने दस सहस्र यादव मुद्रिका पर उन्हें बीड देश का अधिकारी नियुक्त किया गया।"[12]" इस बात का उन्हें बड़ा पष्चाताप हुआ कि राज सेवा में और कुटुम्ब–भरण में ही सारी आयु गंवा दी। अब उन्होंने शेष जीवन भगवच्चरणों में लगाकर सार्थक करने का निश्चय किया। कर्म–धर्म संयोग से इसी समय गोरखनाथ महाराज तीर्थाटन करते हुए आये, गांव में पधारे। त्र्यम्बक पंत उनकी शरण में गये और उनके अनुग्रह के पात्र हुए।[13]

इस अवतरण से स्पष्ट है कि त्र्यम्बक पंत के पूर्व वयस का समय संवत् 1264 है। जब इन्होंने बीड देश के देशाधिकारी का कार्य हाथ में लिया। इन्होंने केवल पांच साल तक इस कार्य को सम्भाला। इसके बाद पुत्र की मृत्यु के उपरान्त इन्हें वैराग्य आ गया और इन्होंने सं0 1270 के लगभग अपनी उत्तर वयस में गोरखनाथ का शिष्यत्व ग्रहण कर लिया। इस तिथि के निर्देश के ज्ञात होता है कि गोरखनाथ सं0 1270 में वर्तमान थे। अतएव इस आधार पर इनका आविर्भाव काल विक्रम तेरहवीं शताब्दी का मध्यकाल ठहरता है।

त्र्यम्बक पंत के ज्येष्ठ पुत्र गोविन्द पन्त और उनकी सहधर्मिणी निरावाई के सम्बन्ध में लिखा गया है कि गोविन्दपन्त और निरावाई दोनों को गोरखनाथ के शिष्य गैणीनाथ से ब्रहमोपदेश प्राप्त हुआ था।[14] गोरखनाथ की शिष्य परम्परा में गैणीनाथ हुए थे। अतएव ये गोरखनाथ जिनसे त्र्यम्बक पंत को ज्ञान प्राप्त हुआ था, हठयोग के प्रवर्तक गोरखनाथ ही थे, इस नाम के अन्य कोई नहीं। श्री ज्ञानेश्वर चरित्र से ज्ञात होता है कि श्री गोरखनाथ के समकालीन थे। श्री त्र्यम्बक पंत, जो श्री ज्ञानेश्वर के प्रपितामह थे। श्री गैणीनाथ के समकालीन थे श्री गोविन्दपंत और उनकी सहधर्मिणी निरावाई। विठ्ठलपंत तो निवृत्तिनाथ और ज्ञानेश्वर के महाराज के पिता ही थे। श्री निवृत्तनाथ का जन्म समय सं0 1330 और श्री ज्ञानेश्वर महाराज का सं0 1332 माना गया है।[15] श्री गोरखनाथ, श्री ज्ञानेश्वर के प्रपितामह के समकालीन थे। श्री त्र्यम्बक पंत का समय सं0 1250 है। अतः गोरखनाथ का समय भी यही मानना चाहिए अर्थात् वे तेरहवीं शताब्दी के मध्य में हुए। गोरखनाथ के काल निर्णय में यह भी कहा जाता है कि गोरखनाथ के एक शिष्य का नाम धर्मनाथ था। उसने चौदहवीं शताब्दी में कनफटे पंत का कच्छ में प्रचार किया।[16] यदि धर्मनाथ का काल चौदहवीं शताब्दी का प्रारम्भिक भाग माना जाय तो गोरखनाथ का काल सरलता से तेरहवीं शताब्दी का मध्य भाग माना जा सकता है। इस साक्ष्य से भी गोरखनाथ तेरहवीं शताब्दी के मध्य में हुए।

श्री ज्ञानेश्वर का प्रमाण अधिक विश्वसनीय ज्ञात होता है, यद्यपि अनेक विद्वानों ने गोरखनाथ के आविर्भाव के सम्बन्ध में अपनी विवेचना और तर्क के आधार पर विधिवत सम्वत् निर्दिष्ट किए हैं। डॉ0 शहीदुल्ला गोरखनाथ का आविर्भाव सं0 722 में मानते हैं। राहुल सांकृत्यायन ने उनका समय सं0 902 निर्धारित किया है। डॉ0 मोहन सिंह के मतानुसार गोरखनाथ का समय विक्रम की नवीं और दसवीं शताब्दी है। डॉ0 बडथ्वाल ने यह समय सं0 1050 निश्चित किया है। डॉ0 फर्कहार गोरखनाथ का समय सं0 1257 मानते हैं।

यदि गोरखनाथ सिद्धों की परम्परा में होने वाले गोरक्षण ही हैं और उन्हीं के द्वारा वज्रयान के प्रभावों को लेकर शैवमत के क्रोड़ में नाथ सम्प्रदाय पोषित हुआ तो श्री राहुल सांकृत्यायन के मतानुसार उनका समय सं0 902 है। किन्तु यह भी सम्भव है कि गोरखनाथ का समय सिद्धों की परम्परा में होते हुए भी दसवीं शताब्दी के बाद हो, क्योंकि चौरासी सिद्धों की परम्परा सं0 1257 तक चलती रही। यदि हम सिद्धों की परम्परा के उत्तरार्द्ध में श्री गोरखनाथ का आविर्भाव मानें तो उनके काल–निर्णय में श्री ज्ञानेश्वरी के प्रमाण की भी सार्थकता चरित्रार्थ हो सकती है और सिद्धों की परम्परा में रहते हुए भी श्री गोरखनाथ तेरहवीं शताब्दी के मध्य में हो सकते हैं।

जाति के आधार पर देखा जाय तो जाहरवीर की कथा पिछड़ी एवं अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लोगों में अधिक प्रचलित है क्योंकि पूर्व में इन जातियों का अपना कोई प्रभुत्व नहीं था तो उन्होंने चमत्कार स्वरूप 'वीर बाबा' जैसे अन्य नामों से मन गढ़न्त कथाओं का प्रचार–प्रसार किया होगा। जो वर्तमान तक आते–आते चमत्कार से परिपूर्ण हो गयीं। जाहरवीर की कथा के प्रचलन में एक बड़ा कारण यह भी हो सकता है कि उच्च जातियों के समुदाय के अपने देवी देवता हैं। जो उनके ईष्ट एवं आराध्य हैं। जैसे – ब्राह्मण जाति के लोगों में भगवान सत्यनारायण (भगवान विष्णु) वैश्यों में धन–कुबेर लक्ष्मी आदि हैं। परन्तु निम्न जाति समुदाय का अपना कोई देवी–देवता न होने के कारण इस जाति वर्ग के लोगों में अधिक प्रचलित हैं। उच्च जाति के लोगों में कथा का प्रचलन तो है लेकिन ये लोग जाहरवीर की पूजा–अर्चना नहीं करते।

प्रायः देखा गया है कि जाहरवीर को पूजने वाले लोगों में गरीब वर्ग की संख्या अधिक है। अपेक्षाकृत अमीर वर्ग के क्योंकि गरीब वर्ग के लोग ज्यादातर निम्न वर्ग से जुड़े हैं और जो जितना कमजोर होता है उसे चमत्कार की जरूरत होती है और गरीब वर्ग चमत्कार के प्रति अधिक आशावान रहता है। शिक्षा के आधार पर जाहरवीर को मानने वाले या तो बिल्कुल अशिक्षित हैं या

अर्द्धशिक्षित। अशिक्षित लोग अधिक अंधविश्वासी होते हैं। उन्हें उम्मीद रहती है कि हमारे आराध्य (जाहरवीर) कोई ऐसा चमत्कार करेंगे जिससे उनका कल्याण हो जायेगा।

जाहरवीर की कथा और जाहरवीर में विश्वास का फलक भौगोलिक रूप में बहुत व्यापक है। हिमाचल प्रदेश से लेकर गुजरात तक और पंजाब से लेकर ब्रजक्षेत्र तक यह फैली हुई है। राजस्थान में तो यह उक्ति प्रचलित है कि गाँव–गाँव में खीजड़ी और गाँव–गाँव में गूगा। हर गाँव में गोगाजी या जाहरवीर की विश्वास परम्परा पायी जाती है। गुजरात में–

"रायकानो राजा तुॅम।
हरिवंशों हीरो तुॅम
मालधारीनो मंगू तुॅम
देशानियां देव तुॅम
ग्वालियानो गोगो तुॅम
रेवारी नूँ राम तुॅम
ऊँझा नूँ अमलदार तुॅम
तुम बलीबहत्तर नूँ नाग तुॅम
जै–जै गोगा महाराज
गुजरात नूँ गोगो तुॅम।।"

प्रचलित है।

जाहरवीर को विभिन्न नामों से अलग–अलग क्षेत्र में जाना जाता है। पर कथा का मूल स्वरूप सब जगह एक ही रहता है। क्षेत्र विशेष के आधार पर कथा कहने की परिपाटी बदल जाती है। कथा में विश्वासों के घाल–मेल का अनुपात बदल जाता है। उसके पात्रों में कुछ संख्या बढ़ जाती है।

इन विविधताओं के पीछे ठोस सामाजिक कारण है। समाज में जाति की संरचनायें एक जैसी नहीं है। धार्मिक विश्वासों का स्वरूप अलग–अलग है। सत्ता के स्वरूप की विशिष्टता जातियों के भीतर भी श्रेष्ठता के अपने पैमाने बनाती है और वैवाहिक सम्बन्धों से लेकर उठने–बैठने के सम्बन्धों तक के स्वरूप इससे प्रभावित होते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि इन विभिन्न प्रकार के सामाजिक सम्बन्धों की बार–बार तरह–तरह से पुनर्रचना होती रहती है और खास स्वरूप की समरूपता विभिन्नता में बदलती चली जाती है।

जाहरवीर की कथा की निर्मित में भारतीय समाज की मानसिक संरचना का वह हिस्सा खास भूमिका अदा करता है जिसकी स्मृतियों में पौराणिक आख्यानों का लम्बा इतिहास क्रियाशील है। महाभारत से लेकर रामायण तक के विभिन्न लौकिक आख्यान जनजीवन की स्मृति का ऐसा हिस्सा बने हुए हैं कि समय पर वे सांस्कृतिक निर्मितियों में हस्तक्षेप करते रहते हैं। इनका हस्तक्षेप एक प्रकार का नहीं रहता। महाभारत का नाम प्रकरण जाहरवीर की कथा में तरह–तरह से आता है। कहीं जन्मेजय के नाग यज्ञ की छाया दिखाई पड़ती है तो कहीं वासुकि का प्रख्यात रूप। नाग प्रकरण में जाहरवीर की कथा महाभारत के ही किसी खण्ड का लोक आख्यान दिखाई देने लगती है।

नाग प्रकरण बड़ा ही चमत्कारपूर्ण हिस्सा है। यह इसलिये भी है कि नागों को नाग जाति के मनुष्यों से अलग सर्प जाति के नागों के रूप में ले लिया गया है। जाहरवीर की कथा में पुनः–पुनः गायन और कथन में धीरे–धीरे नाग मात्र सर्प के रूप में सीमित होते गये हैं और उनके क्रियाकलाप चमत्कार से भरते गये हैं। जाहरवीर की सभी संकलित कथाओं में नागों की भूमिका है विद्वानों ने जाहरवीर पर शोध करते समय बार–बार हिन्दू समाज की नाग पूजा को रेखांकित किया है। शिव का आख्यान, महाभारत का नाग आख्यान, नाग पंचमी की हिन्दू पूजा आख्यान सब मिलकर जाहरवीर की निर्माण प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं।

बाछल के पुत्रवती होने पर लोक मानस की मनोकांक्षा और सीता बनवास प्रकरण में गहरी समानता है कि स्त्री को सामाजिक प्रतिमानों के बाहर जाने में वनवास की आकांक्षा रहती है और यह सामाजिक शान्ति के तहत आता है। समाज के उस मनोभावों को यह व्यक्त करता है कि जन्म के लिए पितृत्व की पहचान एक आवश्यक शर्त बन गई है उसका पालन होना चाहिए। पितृरेखीय उत्तरदायित्व हस्तान्तरण की प्रक्रिया ने इसी मानसिक वृत्ति को और अधिक बल दिया है। यह जाहरवीर के बारे में प्रचलित ऐसी कहानियों में एक तरह का महत्व नहीं पा सका है। इसका कारण है कि सभी समाजों में इस तरह के कृत्य के प्रति एक जैसे भाव नहीं है। कोई समाज इस बात को आसानी से बर्दाश्त कर सकता है कोई मात्र हतोत्साहित करता है तो कोई किसी भी तरह स्वीकार नहीं कर सकता।

इसी तरह जाहरवीर के मृत्यु का प्रकरण सभी कथाओं में एक जैसा नहीं है। महाभारत और रामायण के भी कथा नायकों के अन्त कुछ हद तक रहस्यपूर्ण ही है। युधिष्ठिर हो या राम साधारण मृत्यु को नहीं पाते या तो स्वर्ग को चले जाते हैं या तो समाधि (जल समाधि) ले लेते हैं। जाहरवीर के बारे में भी इसी तरह की बात प्रचलित है। लेकिन सभी कहानियों में एक जैसी नहीं है। कहीं अकेले जाहरवीर हैं तो कहीं उनका साजो–सामान और सम्बन्धी भी है। सभ्यता के इतिहास में भी यह बात देखी जाती है कि लोगों के अन्तिम संस्कार के स्वरूप एक जैसे नहीं हैं। कहीं पर अकेले व्यक्ति का विभिन्न पद्धतियों से अन्तिम संस्कार किया जाता है, कहीं उसके साथ सम्बन्धी भी शामिल किये जाते हैं। उनकी आवश्यकता की पूर्ति के आवश्यक साजो–सामान भी साथ भेजे जाते हैं। इसी तरह का प्रभाव जाहरवीर की कथा में प्रचलित विभिन्न रूपों पर देखा जा सकता है।

जाहरवीर की कथा में कहने की शैली की विविधता है। यह एक महत्वपूर्ण संदर्भ है लेकिन यह एक विवेचन की गम्भीर समानता भी है। वर्तमान में प्रचलित रूप कितने पुराने हैं यह कह पाना सम्भव नहीं है लोक साहित्य के साथ यह समानता है। काल निर्धारण कथा के सम्बन्ध में कुछ तथ्यों के आधार पर आसानी से हो सकता है पर कलारूप का निर्धारण नहीं हो सकता।

अध्ययन का उद्देश्य

मौखिक साहित्य में वर्तमान रूप तो उपस्थित पर इसके पूर्व का रूप क्या है। इसका पता नहीं चलता। वर्तमान रूप में जब भाषाई जातिगत क्षेत्रीय और शैलीगत विभिन्नतायें हैं तो यह और भी मुश्किल हो जाता है। उत्तर भारत में हरियाणा की अपनी लोक शैली है, हिमाचल की

अपनी लोक शैली है राजस्थान और गुजरात की अपनी–अपनी शैलियाँ हैं। इन शैलियों के आधार पर जाहरवीर के भिन्न–भिन्न नाम भी पाये जाते हैं। पर ये सब के सब अपना इतिहास बताने में सक्षम नहीं हैं कि यह कब से इस तरह की है। इसलिये गीत शैली में पायी जाने वाली जाहरवीर की कथा या किस्सा शैली में सुनी जाने वाली कथा या पुराण और ग्रन्थ के रूप में निबद्ध कथा में काफी फर्क देखने को मिलता है। पुराणाकार में जो कथा मिलती है उसका मुख्य ध्येय प्रचारतापरक और उद्देश्यपरक है जबकि गीताकार में मिलने वाले रूप का मुख्य स्वर भाषापरक है जबकि किस्साकार रूप में चमत्कार और जिज्ञासा की प्रधानता रहती है।

निष्कर्ष

इस तरह जाहरवीर की कथा में पायी जाने वाली विविधतायें मुख्यतः उत्तर भारत की सांस्कृतिक संरचना की प्रतिनिधि है उनमें जाति धर्म सम्प्रदाय क्षेत्र भाषा की विशिष्टताओं ने अपने–अपने पहचान तत्वों को छोड़ दिया है। हर एक स्थान के स्थानीय त्यौहारों और उत्सवों की घुसपैठ, विवाह संस्कार आदि की छाप उस स्थान की कथा पर देखी जा सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *चानणमल शर्मा, सावित्री शर्मा : गोरखनाथ एवं जाहरवीर का शोधपूर्ण इतिहास, श्रीराम ऑफसेट जयपुर, सं0 चतुर्थ–2007, पृष्ठ–57।*
2. *चानणमल शर्मा, सावित्री शर्मा : गोरखनाथ एवं जाहरवीर का शोधपूर्ण इतिहास, श्रीराम ऑफसेट जयपुर, सं0 चतुर्थ–2007, पृष्ठ–57।*
3. *चानणमल शर्मा, सावित्री शर्मा : गोरखनाथ एवं जाहरवीर का शोधपूर्ण इतिहास, श्रीराम ऑफसेट जयपुर, सं0 चतुर्थ–2007, पृष्ठ–57।*
4. *चानणमल शर्मा, सावित्री शर्मा : गोरखनाथ एवं जाहरवीर का शोधपूर्ण इतिहास, श्रीराम ऑफसेट जयपुर, सं0 चतुर्थ–2007, पृष्ठ–58।*
5. *चानणमल शर्मा, सावित्री शर्मा : गोरखनाथ एवं जाहरवीर का शोधपूर्ण इतिहास, श्रीराम ऑफसेट जयपुर, सं0 चतुर्थ–2007, पृष्ठ–58।*
6. *चानणमल शर्मा, सावित्री शर्मा : गोरखनाथ एवं जाहरवीर का शोधपूर्ण इतिहास, श्रीराम ऑफसेट जयपुर, सं0 चतुर्थ–2007, पृष्ठ–59।*
7. *चानणमल शर्मा, सावित्री शर्मा : गोरखनाथ एवं जाहरवीर का शोधपूर्ण इतिहास, श्रीराम ऑफसेट जयपुर, सं0 चतुर्थ–2007, पृष्ठ–61।*
8. *चानणमल शर्मा, सावित्री शर्मा : गोरखनाथ एवं जाहरवीर का शोधपूर्ण इतिहास, श्रीराम ऑफसेट जयपुर, सं0 चतुर्थ–2007, पृष्ठ–59।*
9. *चानणमल शर्मा, सावित्री शर्मा : गोरखनाथ एवं जाहरवीर का शोधपूर्ण इतिहास, श्रीराम ऑफसेट जयपुर, सं0 चतुर्थ–2007, पृष्ठ–151।*
10. *जेम्स हेस्टिंग्स : एनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एण्ड एथिक्स, भाग–6, कैसिंगर पब्लिसिंग, पृष्ठ–328।*
11. *डब्ल्यू क्रुक : रिलीजन एण्ड फोकलोर ऑफ नॉर्दन इण्डिया 1926, गवर्नमेन्ट प्रेस, इलाहाबाद, पृष्ठ–108।*
12. *रामचन्द्र पांगारकर : श्री ज्ञानेश्वर चरित्र, गीता प्रेस, गोरखपुर, 1950, पृष्ठ–38।*
13. *रामचन्द्र पांगारकर : श्री ज्ञानेश्वर चरित्र, गीता प्रेस, गोरखपुर, 1950, पृष्ठ–40।*
14. *रामचन्द्र पांगारकर : श्री ज्ञानेश्वर चरित्र, गीता प्रेस, गोरखपुर, 1950, पृष्ठ–41।*
15. *रामचन्द्र पांगारकर : श्री ज्ञानेश्वर चरित्र, गीता प्रेस, गोरखपुर, 1950, पृष्ठ–45।*
16. *विलियन एवार्ट ग्लेडस्टोन : एनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटेनिका, ब्रिटिश पब्लिकेशन, ब्रिटेन, पृष्ठ–328–330।*